**ओ३म्**

**‘संसार के सभी मनुष्यों के पूर्वज एक थे व वैदिक धर्मानुयायी थे’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

सृष्टि का यह अनिवार्य नियम है कि इसमें मनुष्य की उत्पत्ति वा जन्म माता-पिताओं से ही होता है। माता-पिता के बिना शिशु रूप में मनुष्य का जन्म असम्भव है। अतः इससे यह सिद्ध होता है मनुष्य के माता-पिता अवश्य होते हैं। इस सिद्धान्त के आधार पर मनुष्य के पूर्वज सृष्टि के आरम्भ काल से ही होते चले आ रहे हैं। आज हमें यह ज्ञात नहीं है कि तीन चार पीढ़ी पहले हमारे पूर्वज कौन-कौन थे, परन्तु यह सुनिश्चित है कि वह अवश्य थे। इसे इस प्रकार भी कह सकते हैं सृष्टि से आरम्भ पूर्वजों की श्रृंखला कभी टूटी नहीं है। भविष्य में भी जो मनुष्य होंगे उनके माता-पिता अवश्य होंगे और आजकल के कोई न कोई मनुष्य ही उनके पूर्वज होंगे। इस सिद्धान्त को सम्मुख रखकर जब हम मत-मतान्तरों के इतिहास पर विचार करते हैं तो आज संसार के प्रमुख मतों सिख, इस्लाम, ईसाई, अद्वैतमत, बौद्ध, जैन, यहूदी व पारसी मत पर विचार करते हैं तो हमें लगता है कि इन-इन मतों की स्थापना से पूर्व इन मतों के पूर्वज कदापि इन मतों की मान्यताओं व सिद्धान्तों को मानने वाले लोग नहीं थे। उनका मत इनसे कुछ भिन्न अवश्य था जिस कारण इन मतों की स्थापना होकर यह अस्तित्व में आये हैं।

अब हम न मतों के पूर्वजों के भी पूर्वजों पर जब विचार करते हैं तो यह क्रम सृष्टि के आरम्भ पर जाकर समाप्त होता है। सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर ने सृष्टि की रचना पूर्ण होने व इस पृथिवी का वातावरण मनुष्यों के अनुकूल व अनुरूप स्थिति में आने पर ही ईश्वर ने मनुष्यों को उत्पन्न किया था। तर्क, युक्ति व ऊहा से ज्ञात होता है कि यह सृष्टि ईश्वर ने अमैथुनी अर्थात् बिना माता-पिता के की थी। सभी मनुष्य युवावस्था में उत्पन्न किये गये थे क्योंकि यदि शिशु रूप में होते तो उनके पालन करने के लिए माता-पिता की आवश्यकता होती और यदि वृद्धावस्था में ईश्वर इन्हें उत्पन्न करता तो फिर संसार का क्रम अवरुद्ध हो जाता। अतः यह सर्वमान्य सिद्धान्त है कि सृष्टि की आदि में ईश्वर द्वारा की गई दैवीय सृष्टि अमैथुनी थी और उन मनुष्यों का माता-पिता व आचार्य ईश्वर ही था। इससे यह निष्कर्ष सामने आते हैं कि ईश्वर ने अत्यन्त सूक्ष्म प्रकृति के परमाणुओं से इस ब्रह्माण्ड व सृष्टि की रचना की, उसके बाद जंगम अर्थात् प्राणि-जगत पशु-पक्षी-कीट-पतंग-थलचर-जलचर सभी को उत्पन्न किया और ईश्वर की इस क्रम की अन्तिम रचना मनुष्यों की उत्पत्ति थी। सृष्टि की रचना से ईश्वर ज्ञानवान वा सर्वज्ञ सिद्ध होता है। अतः उसके द्वारा मनुष्यों को ज्ञान मिलता सम्भव कोटि में आता है। अतः सृष्टि के आदि काल में सभी मनुष्यों का माता-पिता सहित विद्या का दान देने वाला आचार्य भी ईश्वर ही होता है। इसी बात को योगदर्शन के ऋषि पतंजलि ने भी स्वीकार किया है। ईश्वर ने सृष्टि की आदि में मनुष्यों को किस प्रकार का ज्ञान दिया था? इस पर विचार करने और शास्त्रों का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि यह ज्ञान **‘वेद’** था अर्थात् **ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद।** उपलब्ध प्रमाणों के अनुसार यह ज्ञान क्रमशः अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा नाम के चार ऋषियों को दिया गया था जिन्होंने इसका अन्य सभी मनुष्यों, स्त्री व पुरुषों में प्रचार किया। यह परम्परा 1 अरब 96 करोड़ 8 लाख 53 हजार एक सौ पन्द्रह वर्ष पूर्व सृष्टि के आदि काल से आरम्भ होकर लगभग पांच हजार वर्ष पूर्व हुए महाभारत काल तक विद्यमान रही। इसको विस्तार से जानने के लिए सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका एवं इतर वैदिक साहित्य का अध्ययन किया जाना अपेक्षित है।

**हमारे बहुत से बन्धु यह भी प्रश्न कर सकते हैं कि जब संसार के सभी मनुष्यों का आदि स्थान प्राचीन आर्यावत्र्त व भारत का तिब्बत स्थान था और उनकी भाषा एक संस्कृत थी तो फिर संसार की अलग-अलग भाषायें क्यों हैं?** इसका कारण विचार करने पर भिन्न-भिन्न देशों की भौगोलिक स्थिति, वहां के शब्दोच्चारण में भेद, काल की दूरी, परस्पर के संबंधों में देश व काल की दूरी की शिथिलता आदि अनेक कारण हैं। हम यह भी देखते हैं कि उत्तराखण्ड व निकटवर्ती राज्यों के ही गढ़वाल, कुमायु, जौनसार, सहारनपुर, पंजाब, हरियाणा व हिमाचल में भिन्न भिन्न प्रकार की बोलियां बोली जाती हैं। हमारे अपने एक देश भारत में ही एक सौ से अधिक बोलियां व भाषायें बोली जाती हैं। हमारे परिवार का ही यदि कोई व्यक्ति विदेश चला जाता है, वहां रहता है, एक दो पीढि़यां वहां उत्पन्न होती हैं, वह जब अपने परिवार सहित भारत आते हैं तो वह सहज रूप से अपने माता-पिता व भारत में अपने परिवार की भाषा बोलने में असहज होते हैं। हमने देहरादून के रैफल होम में विदेशी बन्धुओं को यहां के स्थानीय बच्चों के साथ सम्पर्क अर्थात् बातचीत करते हुए देखा है। विदेशी यद्यपि अपने देश की भाषा बोलते हैं परन्तु फिर भी बच्चे उसे ध्यान से सुनते हैं और किसी रोचक प्रसंग के आने पर दोनों ही खिलाखिला कर हंस भी पड़ते हैं। हमें लगता है कि जब आत्मा से कोई बात कही जाती है तो उस भाषा से इतर भाषी लोग जानने की इच्छा से उस बोलने वाले वक्ता के कुछ व अधिक आशय व अभिप्राय को अपनी क्षमतानुसार समझ जाते हैं। अतः मनुष्यों के दूर-दूर देशों में जाकर बसने, वहां की भौगोलिक स्थिति व नई पीढि़यों के उच्चारण आदि में कुछ भेद होने तथा संगति के कारण भाषायें बनती बिगड़ती रहती हैं। **भाषा के आधार पर यह नहीं कह सकते कि हमारे आदि व प्राचीन पूर्वज एक नहीं थे।**

इस सम्बन्ध में यह विचार करना भी आवश्यक है कि सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर ने मनुष्यों की उत्पत्ति किसी एक ही स्थान पर की व एक से अधिक स्थानों पर की? उपलब्ध प्रमाण, तर्क व युक्ति से यह एक स्थान पर हुई ही सिद्ध होती है। प्राचीन शास्त्रों के प्रमाणों से यह स्थान तिब्बत सिद्ध होता है। महर्षि दयानन्द ने भी अपने जीवनकाल (1825-1883) में देश भर में उपलब्ध प्रायः समस्त ग्रन्थों का अध्ययन किया था जिसका निष्कर्ष था कि मनुष्यों की उत्पत्ति 1,96,08,53,115 (यह गणना वर्तमान समय 13 दिसम्बर, 2015 की है) हुई थी। इस प्रमाण का विरोधी कोई पुष्ट प्रमाण न होने के कारण संसार के सभी लोगों के लिए यही मान्यता स्वीकार करने योग्य है। तिब्बत में बड़ी संख्या में स्त्री व पुरुषों की उत्पत्ति होने व ऋषियों को चार वेदों का ज्ञान मिलने, उन ऋषियों द्वारा उस ज्ञान का ब्रह्मा आदि ऋषियों व सभी मनुष्यों में प्रचार करने से सृष्टि का क्रम विगत 1 अरब 96 करोड़ वर्षों में निरन्तर आगे बढ़ता रहा है। आरम्भ के कुछ काल व कुछ पीढि़यों तक लोग तिब्बत में रहे। उनमें से कुछ जिजीविषा व परस्पर के अच्छे-बुरे संबंधों के कारण समय-समय पर नये स्थानों की खोज कर वहां जाकर बसते रहे। इसी प्रकार से यह सारा संसार बसा व आबाद हुआ है। आवश्यकता आविष्कार की जननी होती है। मनुष्यों का परस्पर स्वभाव भी भिन्न-भिन्न होता है। बहुत से यायावर प्रकृति के भी होते हैं जो नय-नये स्थानों पर आने व जाने की रूचि वाले होते हैं। महर्षि दयानन्द ने भी किसी शास्त्र व ग्रन्थ के आधार पर पूना में सन् 1874 में दिये अपने प्रवचनों में यह बताया था कि अति प्राचीन काल में आदि मनुष्य आर्यों ने विमानों का निर्माण कर लिया था। वह विमान में अपने कुछ मित्रों के साथ देश-देशान्तरों में भ्रमण किया करते थे। उनकों जहां कोई स्थान पसन्द आ जाता तो अपने परिवार व इष्ट-मित्रों को वहां ले जाकर बसा देते थे। उनके अनुसार इस प्रकार से ही संसार बसा है। युक्तियों से भी यही सिद्ध होता है। **यह सिद्धान्त व मान्यता पूर्णतया तर्क पर आधारित है। अकाट्य तर्क ही सत्य होता है, अतः इस मान्यता के सत्य होने में किसी सन्देह का कोई कारण नहीं है।**

इस लेख के माध्यम से हमारा यह निवेदन है कि इस तथ्य को सभी मत-मतान्तरों के वर्तमान आचार्यों व उनके अनुयायियों को जानना व समझना चाहिये। यह जानकर कि संसार के हम सभी लोगों के पूर्वज वैदिक धर्मी आर्य थे हमें परस्पर एक दूसरे से प्रे़म व मित्रता पूर्वक एक परिवार की ही तरह व्यवहार करना चाहिये। वैदिक संस्कृति के पूर्वजों ने **‘वसुधैव कुटुम्बकम्’** अर्थात् सारा विश्व एक परिवार है, कहकर भी इसी तथ्य को प्रस्तुत किया है। क्या वर्तमान समय में प्रचलित सभी मत-मतान्तरों किंवा धर्म व धर्मों के आचार्य इस तथ्य को स्वीकार कर परस्पर भगिनी-बन्धु, मित्र व एक परिवार जैसा व्यवहार करने पर विचार करेंगे और इसकी शिक्षा अपने अपने मत के अनुयायियों को देंगे जिससे विश्व से सर्वत्र अशान्ति व दुःख दूर होकर सुख व शान्ति का वातावरण बन कर सभी के जीवन परस्पर हितकारी व कल्याणीकारी हो सकें।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**